ORIGINAL RESEARCH PAPER

History

KEY WORDS:

जैनागम में ध्यान का स्वरूप

प्रोफेसर डॉ. बी.एल. सेठी पीएच.डी., डी.लिट्. इतिहास विभाग श्री जगदीशप्रसाद झाबरमल टिबड़ेवाला विश्वविद्यालय, विद्यानगरी, चुड़ैला, झुन्झुनूं (राज.)

सुभाष चन्द रिसर्च स्कोलर

यह एक स्थापित सत्य है कि आजतक जो भी जीव आत्मा से परमात्मा बने हैं, रागी से वीतरागी बने हैं, अल्पज्ञ से सर्वज्ञ बने हैं, सांसारिक सुख –दुखों से मुक्त होकर अनंत सुखी हुए है वे सभी ध्यान की अवस्था में ही हुए है, आत्मध्यान की अवस्था में ही हुए हैं।अतः मुक्ति के मार्ग में आत्मध्यान की उपयोगिता असंदिग्ध है।

जिस ध्यान से यह आत्मा परमात्मा बनता है उस ध्यान की चर्चा सम्पूर्ण जैस समाज द्वारा एक स्वर से मान्य आचार्य उमास्वामी कृत प्राचीनतम ग्रन्थराज महा ाास्त्र **तत्त्वार्थसूत्र** अपरनाम **मोक्षशास्त्र** में इस प्रकार कहा गया है–

"उत्तम संहननवाले के अन्तर्मुहूर्त तक एकाग्र होकर चिन्ता का निरोध ध्यान है।"

उक्त सूत्र **तत्त्वार्थसूत्र** का 26 वाँ सूत्र है और इसके बाद 44 वें सूत्र तक लगातार 18 सूत्रों में विस्तार से ध्यान की चर्चा है।

महाशास्त्र तत्त्वार्थसूत्र पर विगत दो हजार वर्शो में विभिन्न भाशाओं में अनेकानेक टीकायें लिखी गई हैं, जिनमें संस्कृत भाशा में आचार्य पूज्यपाद देवनन्दी कृत सर्वार्थसिद्ध, आचार्य अकलंकदेव कृत तत्त्वार्थ राजवार्तिक और आचार्य विद्यानंदी कृत भलोकवार्तिक आदि प्रमुख हैं।कहते हैं कि आचार्य समन्तभद्र ने इस महान ग्रन्थ पर गंधहस्ति महाभाश्य नामक एक महाभाश्य भी लिखा था, जो आज अनुपलब्ध है।उक्त सभी टीका ग्रंथों में उक्त सूत्रों पर यद्यपि पर्याप्त प्रकाश डाला गया है, तथापि अन्तर मात्र संक्षेप व विस्तार का ही है, विशयवस्तु लगभग समान ही है।उक्त सम्पूर्ण विशयवस्तु के आलोढन के उपरान्त जो तथ्य उभर कर सामने आते है, यहाँ उनके संदर्भ में इस विशय पर अनुशीलन अपेक्षित है।[1]

उक्त सूत्र में जिस ध्यान को परिभाशित किया गया है, वह उत्तम संहननवालों के ही होता है। यद्यपि वज्रर्शभनाराच, वज्रनाराच और नाराच इन तीन संहननों को उत्तम संहनन माना गया है, तथापि जिस ध्यान से अश्ट कर्मो का विनाश होता है, मोह–राग–द्वेश का पूर्णतः अभाव होकर पूर्ण वीतरागता प्रगट होती है, सर्वज्ञता प्राप्त होती है, वह ध्यान तो भुक्लध्यान है और वह प्रथम संहनन वज्रर्शभनाराच संहननवालों के ही होता है, चौथे काल में ही होता है, अभी इस पंचमकाल में होता ही नहीं है। उस ध्यान के आरंभ के दो पाये तो उपशमश्रेणी या क्षपक श्रेणी में होते हैं और भोश दो पाये क्रमशः तेरहवें गुणस्थान के अन्त में और चौदहवें गुणस्थान में होते हैं।

पृथक्त्ववितर्क नामक पहला भुक्लाध्यान आठवें गुणस्थान में आरंभ होकर क्षपक श्रेणीवालों के दशवें गुणस्थान तक और उपशम श्रेणीवालों के ग्यारहवें गुणस्थान तक होता है। इसके निमित्त से मोहनी कर्म का क्षय या उपशम होता है अर्थात् मोह–राग–द्वेश का अभाव होता है और एकत्ववितर्क नामक दूसरा भुक्लध्यान बारहवें गुणस्थान में होता है, उसके निमित्त से ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्म का क्षय होता है। **इस प्रकार यह सुनिश्चित हुआ कि अरहंत और सिद्धदशा की प्राप्ति का हेतुभूत भुक्लध्यान तो इस काल में संभव ही नही है।**[2]

यहाँ एक प्रश्न संभव है कि क्या आप यह कहना चाहते हैं कि मुक्ति प्राप्ति का हेतुभूत ध्यान इस काल में होता ही नहीं है ? यदि यह बात सत्य है तो फिर इसका आशय तो यह हुआ कि पंचम काल में मुक्तिमार्ग आरंभ ही नहीं होता।**नही, ऐसी बात नहीं है, क्योंकि मुक्तिमार्ग तो चौथे गुणस्थान से ही आरंभ हो जाता है। अरे भाई ! अकेला भुक्लध्या नही ध्यान नहीं है।** ध्यान चार प्रकार के होते हैं – आर्तध्यान, रौद्रध्यान धर्मध्यान और भुक्लध्यान।[3] इन चारों ध्यानों में प्रत्येक ध्यान के चार–चार भेद हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर ध्यान सोलह प्रकार के हो जाते है।

उक्त चार ध्यानों में आर्तध्यान और रौद्रध्यान तो संसार के कारण हैं और अन्त कें दो ध्यान अर्थात् धर्मध्यान और भुक्लध्यान मुक्ति के कारण हैं।इस प्रकार यह सुनिश्चित होता है कि इस पंचमकाल में मुक्ति का हेतुभूत धर्मध्यान होता है।ध्यान के संदर्भ में उक्त चारों ध्यान और उनके चार–चार भेदों का समान्यज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि आज ध्यान की चर्चा तो बहुत होती है, पर उसके स्वरूप को बहुत कम लोक जानते हैं।

ध्यान–ध्यान सब कोई कहे, ध्यान न जाने कोय।
ध्यान पंथ जाने विना, ध्यान कहाँ से होय।।[4]

(क) दुःख–पीड़ारूप चिन्तवन आर्तध्यान है। अनिश्टसंयोगज इश्टवियोगज, वेदनाजन्य और निदाजन के भेद से आर्तध्यान चार प्रकार का होता है।

1. अनिष्ट पदार्थो के संयोग होने पर, उन्हें दूर करने के लिए होने वाल प्रबल चिन्तवन अनिश्टसंयोगज नामक आर्तध्यान है।
2. इश्ट पदार्थो के वियोग होने पर, उन्हें प्राप्त करने के लिए होनेवाले प्रबल चिन्तवन इश्टवियोगज नाम आर्त्तध्यान है।
3. वेदना अर्थात, रोगजनित पीड़ा होने पर, उसे दूर करने के लिए होनेवाला संक्लेश परिणामरूप प्रबल चिन्तवन वेदनाजन्य आर्त्तध्यान है।
4. भविश्यकाल संबंधी विशयों की प्राप्ति की कामना में चित्त का तल्लीन होना निदानज आर्त्तध्यान है।

उक्त आर्तध्यान अपनी–अपनी भूमिकानुसार पहले गुणस्थान से छठवें गुणस्थान तक होते हैं। ध्यान रहे छटवें गुणस्थान में निदान नामक अर्तध्यान नहीं होता, भोश तीन आर्तध्यान होते हैं।[3]

(ख) निर्दयता/क्रूरता में होने वाले आनन्दरूप परिणामों का नाम रौद्रध्यान है। हिंसानन्दी, मृशानन्दी, चौर्यानंदी और परिग्रहानंदी के भेद से यह रौद्रध्यान भी चार प्रकार का होता है।

1. हिंसक कार्यो और भावों में आनन्दित होना, उसी प्रकार के भावों में तल्लीन रहना हिंसानंदी रौद्रध्यान है।
2. असत्य बोलने और बोलने के भावों में आनन्दित होकर तल्लीन रहना मृशानन्दी रौद्रध्यान है।
3. चोरी करने और चोरी संबंधी भावों में आनन्दित होकर तल्लीन रहना चौर्यानन्दी रौद्रध्यान है।
4. परिग्रह जोड़ना, जोड़ने व रक्षा करने के भावों में आनन्दित होकर तल्लीन रहना परिग्रहानंदी रौद्रध्यान है।यह रौद्रध्यान अपनी–अपनी भूमिकानुसार पहले गुणस्थान से पाँचवें गुणस्थान तक होता है।

इस प्रकार यह सुनिश्चित है कि अज्ञानी और ज्ञानी – दोनों प्रकार के गृहस्थों – श्रावकों को ये दोनो ध्यान होते हैं और अपनी–अपनी भूमिकानुसार लगभग निरन्तर होते रहते हैं।उक्त दोनो ध्यानों मे आर्तध्यान दुखरूप है, दुखी होनेरूप है और रौद्रध्यान आनन्दरूप है, हिंसादि पापों और रागादि भावों में आनन्दरूप परिणमित होनेरूप है। कर्मोदय से प्राप्त होने वाले इश्टनिश्ट संयोग भी परिग्रहनामक पाप ही हैं। अनुकूल संयोगो में आनंदित होना भी परिग्रहानन्दी रौद्रध्यान है।उक्त दोनों ध्यानों में अज्ञानियों के आर्तध्यान को तिर्यचगति का और रौद्रध्यान को नरकगति का कारण माना गया है।

सोचने की बात यह है कि जब हम ध्यान के संबंध में बात करते हैं या सोचते हैं या उसकी आवश्यकता बताते हैं, ध्यान करने की प्रेरणा देते है, उपयोगिता समझाते हैं, ध्यान का अभ्यास करने की बात करते है, तब क्या हमारे ध्यान में यह बात स्पश्ट होती है कि ये आर्तध्यान और रौद्रध्यान भी ध्यान हैं तथा ये ध्यान तिर्यच और नरकगति के बंध के कारण हैं।

इसी प्रकार जब हम ऐसे संयोगों में घिरे होते हैं, जिन्हें हम नहीं चाहते हैं, जो हमे अनिश्ट लगते हैं, उन्हें दूर करने के या उनसे बचने के बारे में सोच रहे होते हैं, भले ही हम उन्हें न मारे, पर मर जावें तो अच्छा है – ऐसा सोच रहे होते हैं, किसी बीमारी से कश्ट में होते हैं और उसके बारे में ही सोचते रहते हैं, या फिर मैंने यह अच्छा कार्य किया है, इसके फल में **मुझे धनादि की प्राप्ति हो, पुत्रादि की प्राप्ति हो, स्वर्ग की प्राप्ति हो – ऐसा सोच रहे होते है, तब क्या हम यह जानते हैं कि ऐसा करके हम ऐसा महापाप कर रहे है, जिसके फल में हमे तिर्यचगति में जाना होगा, क्योंकि ये सब आर्तध्यान के ही रूप हैं।**[5]

क्यो आप यह भी जानते हैं कि तिर्यंच अकेले गाय – भैस और कुत्ते बिल्ली का ही नाम नहीं है, तिर्यचगति में सभी प्रकार की कीड़े–मकोड़े, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति भी भामिल है। अधिक क्यो कहें निगोद भी तिर्यंचगति में ही है।

किसी व्यक्ति या वस्तु के वियोग में दुखी होना या फिर किसी वस्तु, व्यक्ति या स्थिति के संयोग में विकल्प करना, दुखी होना, भारीरिक वेदना से व्याकुल होना और भविश्य में अनुकूल संयोगों की वांछा करना ऐसे पाप हैं,

ध्यान है, जो हमे निगोद में भी पहुँचा सकते है।

इसी प्रकार जब हम किसी के विनाश या विपत्ति को देखकर आनन्दित होते है, झूठ बोलकर आनन्दित होते है, इन्कमटेक्स–सेल्सटेक्स आदि की चोरी करके आनन्दित होते हैं, परिग्रह को जोड़कर आनन्दित होते हैं, तब भी क्या हम यह सोच पाते हैं कि हमारी यह वृत्ति–प्रवृत्ति रौद्रध्यान है, जो नकरगति का कारण है।

भले ही हमने किसी की न मारा हो, मारनेवाला आंतकवादी भी क्यों न हो, पर उसकी मौत के समाचार सनुकर आनन्दित होना हिंसानन्दी रौद्रध्यान है। इसीप्रकार हमने झूठे न बोला हो, चोरी नहीं की हो, पैसा भी न्यायपूर्वक ही क्यों न कमाया हो तब भी यदि हमउ क्त कार्यो को देखकर, जानकर, उक्त संयोगों को पाकर आनन्दित होते हैं तो हमारे वे आनन्दरूप परिणाम क्रमशः मृशानन्दी, चौर्यानन्दी और परिग्रहानन्दी रौद्रध्यान है, जो हमें सीधे नरक में ले जा सकते हैं।हम घर के एकान्त में बैठे –बैठे टी.बी. देख रहे हैं। उसमें खलनायक की पिटाई देखकर खिल–खिलाकर हंस पड़तें है, किसी झूठ पर हंस पड़ते हैं, चोरी देखकर या भोयरों के भाव चढते है देखकर प्रमुदित हो उठते हैं, तब क्या आपको ऐसा लगता है कि हम कोई पाप कर रहे है?

आप तो यही सोचते हैं कि हम एकदम भान्त बैठे हैं , किसी का भला–बुरा कुछ भी नहीं कर रहे हैं, किनतु आपको पता होना चाहिये कि आप रौद्रध्यान कर रहे हैं जो आपको नरक में ले जा सकता है।कुछ लोग कहते हैं कि हमारा दिल तो बहुत कमजोर है जब कोई भावुक दृश्य आता है तो हमारी आंखों में आंसू आ जाते हैं। हिंसादि के दृश्य तो हमसे देखे भी नहीं जाते। वे ऐसा मानते हैं कि हम तो बहुत धर्मात्मा हैं पर भाईसाहब ! आपका यह रोना–धोना आर्तध्यान है, जो आपको न केवल पशुगति में ले जा सकता है, निगोद का कारण भी बन सकता है।

यद्यपि जिनागम का अध्ययन –अध्यापन स्वाध्याय नामक तप है, आज्ञाविचय, अपायविचय विपाक विचय और संस्थानविचय नामक धर्मध्यान है तथापि हम जब पुराण पढ रहे होते हैं, प्रथमानुयोग का स्वाध्याय कर रहे होते है तब जिन्हें हम इश्ट समझते हैं उन्हें होनेवाली प्रतिकूलताओं में दुखी होना भी आर्तध्या नही तो है।इसी प्रकार जो हमें ठीक नहीं लगते, उनके बध–बंधन में प्रमुदित होना भी तो हिंसानदी रौद्रध्या नही है। रावण या दुर्योधन के वध में आनन्दित होना भी तो रौद्रध्यान का ही एक रू‍प हैं।

जो प्रथमानुयोग के भास्त्र वैराग्य के निमित्त है हम अपने अज्ञान से उन्हें पढकर भी आर्त–रौद्रध्यानरूप परिणमित होते हैं।

आप कहसकते हैं कि इस प्रकार तो देव–शास्त्र–गुरू के वियोग में दुखी होना भी आर्तध्यान में आयेगा ? यह तो आप जानते ही हैं कि ये इश्टवियोगज और अनिश्टसंयोगज जैसे आर्तध्यान छटवें गुणस्थान तक नग्न दिग्म्बर भावलिंगी मुनिराजों को भी होते हैं। उनके तो तीर्थंकरों के वियोग, अपने गुरूओं के वियोग, शिश्यों के वियोग में होने वाले दुःखी परिणाम ही आर्तध्यानरूप होंगे, क्योंकि अन्य कोई तो उन्हें इश्ट होता ही नहीं है।

सन्दर्भ सूची

1. तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय 9, सूत्र 28
2. तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय 9, सूत्र 29
3. तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय 9, सूत्र 31 से 34
4. रत्नकरण्डश्रावकाचार, छनद 35
5. आचार्य पूज्यपाद : इश्टोपदेश, छनद 50